प्राचीन भारत में पंचमहाभूतों के सन्दर्भित पर्यावरण संपोषण

चन्द्रकेतु सिंह* डॉ0 राजेश कुमार सिंह**

*शोधार्थी, इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या (उ0प्र0)

** सह-आचार्य, इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ0प्र0)

Article History:

Received: 10-08-2025

Accepted: 25-09-2025

Published: 30-09-2025

Keywords:

प्राचीन भारत, पंचमहाभूत, पर्यावरण

Page No.: 251-254

Article code: V2025030

Access online at: https://veethika.co.in

Source of support: Nil

Conflict of interest: None declared

Published By: Pt. R.S.T.M. Society, Lucknow, India

Corresponding Author:

चन्द्रकेतु सिंह

शोधार्थी, इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या (उ0प्र0)

Email:

chandraketu235@gmail.com

शोध-सार

भारतीय वाड्.मय में 'पंचमहाभूतों' को सृष्टि रचना का आधार एवं संतुलन का मूलाधार माना गया है। इन भूतों से ही सृष्टि की स्वस्थ निरंतरता सम्भव है। इस कारण हमारे प्राचीन ग्रन्थ- वेद में पंचमहाभूतों को पर्यावरण संपोषण का अभिन्न अंग माना गया है। पृथ्वी, जो सम्पूर्ण जीवों, वनस्पतियों एवं पर्वत-जंगलों आदि को धारण करती है, को माता का दर्जा प्रदान कर सबकी जननी एवं सम्पोषक मानकर उसकी स्वस्थता को मानव का प्राथमिक उत्तरदायित्व बताया गया है। जल, जीवन का आधार तत्त्व है, जिससे जल-स्रोतों का उन्नयन, संरक्षण, सुरक्षा एवं स्वच्छता को बनाये रखने का विधान हमारे प्राचीन ग्रंथों में किया गया है। अग्नि, हमारे अंदर निहित विकारों का दहन कर मानव उपयोगी सामग्रियों का सम्पोषण करती है, जिससे इसे साक्षी मानकर पवित्रता की शपथ का प्रावधान किया गया है। आकाश, पंचमहाभूतों में से एक है, जिसका विधान शून्य रूप में लिया जाता है, जिससे समस्त सृष्टि का संतुलन बना रहे। वायु, को प्राण-वायु नाम से हमारे ऋषियों ने सम्बोधित किया है, इसके द्वारा वातायन का काम सम्पन्न किया जाता है और मानव जीवन के लिए आक्सीजन जैसी महत्वपूर्ण तत्त्व का सम्पेषण, तो पेड़-पौधों के लिए कार्बन डाई-आक्साईड का सम्पेषण इसके द्वारा किया जाता है। हमारे शास्त्रों में उन्नचास कोटि के वायु की चर्चा की गयी है, जिसके बारे में वर्तमान विज्ञान को भी पूर्ण संज्ञान नहीं है। संक्षेप में, पंचमहाभूत और पर्यावरण संपोषण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रस्तुत शोधपत्र इसी के सन्दर्भित द्वितीयक तथ्यों के आधार पर ऐतिहासिक पद्धति का प्रयोग कर अन्वेषणात्मक एवं विवेचनात्मक प्रणालियों के द्वारा विश्लेषित किया गया है।

प्रस्तावना

वेदों में जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी का स्तवन अनेक स्थलों में किया गया है। अग्नि को पिता के समान कल्याणकारी कहा गया है- 'अग्ने। सूनवे पिता इव नः स्वस्तये आ सचस्व'। ऋग्वेद (1.23.248) में जल के महत्व को बताया गया है- 'अप्सु अन्तःअमृतं, अप्सु भेषजं' अर्थात् जल में अमृत है, जल में औषधि गुण विद्यमान रहते हैं अस्तु, जल की शुद्धता, स्वच्छता बनाये रखें। ऋग्वेद (1,555,1976) में ही ऋषि आशीर्वाद देते हुए कहते हैं- 'पृथ्वीःपूःच उर्वी भव अर्थात् समग्र पृथ्वी संपूर्ण परिवेश परिशुद्ध रहे, नदी, पर्वत, वन, उपवन सब स्वच्छ रहें, गांव, नगर सबको विस्तृत और उत्तम परिसर प्राप्त हों, जिससे जीवन का सम्यक विकास हो सके। यजुर्वेद में यज्ञ विधियों एवं यज्ञ में प्रयुक्त मंत्र पर्यावरण संरक्षण के निमित्त हैं। यज्ञ स्वयं एक चिकित्सा है, मंडल को शुद्ध कर रोगों और महामारियों को दूर करता है। इसमें अनेक प्रकार की चिकित्सा पद्धति एवं जड़ी बूटियों तथा शल्य चिकित्सा व विभिन्न रोगों का वर्णन किया गया है। सामवेद में उल्लिखित मंत्रों से प्रमाणित होता है कि वैदिक ऋषियों को ऐसे वैज्ञानिक सत्यों का ज्ञान था, जिनकी जानकारी आज के वैज्ञानिकों को सहस्राब्दियों बाद प्राप्त हो सका है। चाणक्य ने पर्यावरण संरक्षण की संकल्पना हमारे ग्रंथों से ग्रहण करते हुए उसे राज्य की विधायिका में सम्मिलित करने पर बल दिया था। उनके न्यायशास्त्र में उल्लेख है कि, राज्य को जंगलों को बनाए रखने के लिए हर सम्भव कदम उठाया जाना चाहिए; यथा- पेड़ों को काटने और जंगलों को नुकसान पहुंचाने के लिए दंड का प्रावधान, जंगली जानवरों को संरक्षित जंगलों में रखने का प्रावधान। चाणक्य इसे पर्यावरण विषाक्तता के रूप में संदर्भित करते थे। उस वक्त "प्रदूषण" शब्द अस्तित्व में नहीं था, फिर भी उनका तर्क था कि, पर्यावरण को बनाने वाले पांच प्राथमिक तत्व- अंतरिक्ष, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी- सभी प्रकृति नामक मौलिक ऊर्जा के वंशज हैं, और मानव के शरीर की रचना भी उन्हीं से हुई है। इसीलिए पांच इंद्रियों की संकल्पना विकसित की गयी।

शास्त्रों में समस्त प्राकृतिक संरचना को पंच तत्त्वों के सम्मिश्रण से निर्मित बताया गया है। अन्य शब्दों में, प्रकृति अर्थात् पंचमहाभूतों की सहज एवं साम्यावस्था है, जिसको मनुष्य द्वारा जब भी विश्रंःखलित एवं विखण्डित करने का प्रयास किया जाता है, तो विक्षोभ या असंतुलन का जन्म होता है। फलतः पंचमहाभूतों से निर्मित मनुष्य, पशु-पक्षी तथा स्थावर उपादानों पर हानिकारक प्रभावों से विनाश लीला का प्रादुर्भाव। साक्ष्यों से उद्घाटित है कि, मनुष्य वर्तमान में इस पृथ्वी का सर्वाधिक हिंसक, क्रूर एवं शोषक प्राणी के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर लिया रहा है। उसकी भोगवादी प्रवृत्ति अपरिहार्य विभीषिका को सवंर्धित कर रही है। हमारे मनीषियों ने प्रकृति को माता की संज्ञा दी और इसके अनाचारयुक्त दोहन के प्रति चेताया भी है। ईशोपनिषद[1] का आरम्भ इस उद्घोष से किया गया है-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।

ऋग्वेद[2] के विश्वदेवा सूक्त में जिन प्रार्थनाओं को अंकित किया गया है, वे अतीत, वर्तमान एवं अनागत सभी अवधियों में सर्वत्र एवं सर्वप्राणि हिताय उपादेय एवं अनुकरणीय है। इसके मन्त्रों में पंचमहाभूतों की प्रार्थना के साथ-साथ सभी दिशाओं में विर्कीण सरबुद्धि के ग्रहण करने का संदर्भ ग्रहण किया जा सकता है। सभी के कल्याण की प्रार्थतना पग-पग पर किया गया है। समकालीन समाज की सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि, हम जड़ एवं स्थावर पदार्थों के अतिशय द्वारा सामाजिक विकास के छद्म आवरण में अपनी कृत्सिप्त एवं स्वार्थ लिप्सा की अंधाधुंध आपूर्ति में संलग्न हैं। मनुष्य एक चिंतनशील चैतन्य प्राणी है, जिसे यह विस्मृत कर अनाचार पर उतारू हो गया है। इसी के दृष्टिगत हमारे मनीषियों द्वारा कुछ संस्थागत नियमों का प्रतिपादन किया था, जिनको आज हम नजरअंदाज कर मनमानी करने की ओर सतत् अग्रसर हैं। फलतः प्राकृतिक संरक्षण एवं संपोषण सम्बन्धी अनेक समस्याओं का उदय हुआ है और जीव जगत भयानक दुष्परिणाम की ओर अग्रसर है। इसी के सन्दर्भित प्रस्तुत शोधपत्र में पंचमहाभूतों के प्रति आर्श दृष्टिकोण, समाष्टि कल्याण एवं पंचमहाभूतों को नष्ट करने के प्रति प्रायश्चित एवं दण्ड के रूप में प्रतिपादित किये गये नियमों एवं निर्देशों की प्रासंगिक एवं समाज संदर्भी विवेचना प्रस्तुत किया गया है। साथ ही, पर्यावरण संपोषण की वर्तमान दुषित परिस्थिति में इन सन्दर्भों की प्रासंगिकता का उद्घाटन किया गया है।

भारत के प्राचीन चिन्तनधारा और प्रकृति एक-दूसरे के पूरक थे। हमारी समस्त रचनाओं में प्रकृति-चित्रण को एक अन्यतम् स्थान प्रदान किया गया था। इनमें प्रकृति और प्राणी जीवन के शाश्वत् सम्बन्धों की विवेचना प्रस्तुत की गयी है। यथा- विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक ऋग्वेद में प्राकृतिक तत्त्वों को मूर्त रूप देकर विविध विषयों का वर्णन किया गया, जो वैदिक कालीन व्यवस्था में प्रकृति के प्रति आस्था को उजागर करता है।

प्रकृति का दूसरा निहितार्थ पर्यावरण है, जब प्रकृति विनष्ट होती है, तब अनेक विकृतियों के साथ प्राणी का भी विनाश की ओर अग्रसर होना स्वाभाविक प्रक्रिया हो जाता है। इसके शाब्दिक अर्थ- परि$आवरण अर्थात् हमारे चारों ओर प्राकृतिक तत्त्वों का आवरण से भी उद्घाटित है, यथा- वायु, जल, अग्नि, आकाश, चन्द्रमा, पृथ्वी, वनस्पति, नदी, पर्वत, पशु, पक्षी इत्यादि। ये ही आवरण समस्त जीव-जगत के जीवन का आधार हैं। यजुर्वेद[3] (36/17) में पर्यावरणीय घटकों की स्तुति ऋषियों ने प्रस्तुत की है, जिमें मनुष्यों द्वारा प्रकृति के आभार प्रकट किया गया है।

भारतीय धर्मशास्त्रों में सृष्टि की उत्पत्ति पंच-महाभूतों मानी गयी है- पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, और वायु। ये पर्यावरण के अति-महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य तत्त्व हैं। इनने महाभूतों में से यदि किसी एक में भी कोई विकृति आती है, तो पर्यावरण का ह्रास स्वभावतः आरम्भ हो जाता है। अतः इन पंच-महाभूतों का सम्यक सन्तुलन अत्यावश्यक है। इसका मूल कारण इन्हीं से सृष्टि का निर्माण और अस्तित्व संरक्षण है।

पंच-महाभूतों में प्रथम तत्त्व पृथ्वी है। पुराणों[4] में पृथ्वी को स्वच्छ, सुन्दर, विमल, निर्मल कहकर उसकी वंदना की गयी है और इसे देवी का स्वरूप बताया गया है। पृथ्वी सभी जीवों के जीवन का आधार है, एकमात्र पृथ्वी ही बोये हुए एक बीज को अनेकों की मात्रा वापस करती है। वामन पुराण में भूमि अर्थात् पृथ्वी को स्वच्छ बनाये रखने के लिए स्वच्छ स्थान पर मलमूत्र आदि को निषिद्ध किया गया है। किन्तु आज का सभ्य कहने वाला मानव अविसर्जित पदार्थों के द्वारा अनेक प्रकार से भूमि व भूमिगत प्रदूषणों में वृद्धि करता जा रहा है। जबकि, हजारों वर्षों पूर्व रचित वेद, पुराणों में पृथ्वी को देवी का स्वरूप कहकर मानव का इससे माता-पुत्र का सम्बन्ध स्थापित किया गया था। अथर्ववेद[5] के एक मन्त्र में कहा गया है-

"नमो मातरै पृथित्यै, माता भूमि पुत्रोऽहम् पृथित्याः पादस्पर्ष क्षमस्व में।''

- (अथर्ववेद 12/1/12)

पंच-महाभूतों में द्वितीय तत्त्व 'जल' है, जो पृथ्वी पर शक्तिवर्धक और सभी जीवों का जीवन-तत्त्व है। इसकी की सहायता से ही पृथ्वी वृक्ष-लता-वनस्पति आदि का पोषण करती है। पृथ्वी के प्रमुख जल स्रोतों में नदियाँ हैं, जिन्हें हमारे शास्त्रों में देवी के रूप में वर्णित किया गया है। किन्तु, वर्तमान मानव उनका अनियोजित दोहन कर उन्हें प्रदूषित कर दिया है अथवा कर रहा रहा है। वामन पुराण[6] के अनुसार जो मानव जल को प्रदूषित करे उसे दुर्गन्ध युक्त तालाब में डाल दिया जाना चाहिए। पुराणों में रूद्रदेव को सशरीर रूप जल कहा गया है।

पंच-महाभूतों में तृतीय तत्त्व 'अग्नि' है, जो तेज प्रकाश ऊर्जा के रूप में सर्वत्र विद्यमान है। अग्नि को देव कहा गया है, जिसका प्रमुख स्वरूप सूर्य है। सूर्य समस्त सृष्टि में ऊर्जा का पोषण करता है। जीवों के शरीर में अवस्थित जठराग्नि उनके भोज्य पदार्थों के पाचन में सहयोग देती है। अग्निरूपी सूर्य जल को वाष्पीकृत कर बादलों में परिवर्तित करता है, जिससे वर्षा होती है। इसके लिए सनातन शास्त्रों में यज्ञ का विधान बताया गया है। वर्षा से हमारा वातावरण स्वच्छ होता है।

पंच-महाभूतों में चतुर्थ तत्त्व 'आकाश' है, जिसे पुराण[7] में महादेव का एक अन्य स्वरूप बताया गया है। प्रत्येक जीव में आकाश तत्त्व का विशेष महत्व बताया गया है। आकाश ही वातायन का काम करता है और जीवों के शरीर, मन एवं आत्मा को

स्फूर्त रखता है। कहा गया है कि, प्राणी को भोजन करते समय ध्यान रखना चाहिए कि, उसके उदर का एक चौथाई हिस्सा खाली (आकाश) रहे।

पंच-महाभूतों में पंचम तत्व 'वायु' है। वायु जीवों के शरीर में अमूर्त रूप से विचरण करती है, जो पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटकों में से एक है। शास्त्रों में वायु का गुण 'गन्ध' कहा गया है। वाल्मीकि रामायण में स्वच्छ वायु का पर्यावरण की समृद्धि के लिए अनिवार्य बताया गया है। वायु पुराण[8] में इसे 'पवनदेव' कहा गया है, जो पूज्य हैं।

पर्यावरण संवर्धन में हमारे चारों ओर रहने वाले अन्य जीवों का भी विशेष योगदान है, जिसे विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है। मानव-प्रकृति तथा अन्य जीव-जन्तु एक-दूसरे के पूरक है।[9] इसी कारण पुराणों में पशुओं को भी देवरूप मानकर पूज्य कहा गया है; यथा- गाय को 'गौ' माता, बैल को महादेव का वाहन नन्दी इत्यादि। वर्तमान में पर्यावरण विद् पारिस्थितिकी संतुलन के दृष्टिगत पशुओं एवं पक्षियों की हत्या पर चिंता व्यक्त करते रहते हैं।[10] इनके संरक्षण के लिए हमारे मनीषियों ने 'अहिंसा' तथा 'जीवों पर दया' जैसे सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है।[11]

सारांशतः, पर्यावरण के निर्मायक पंच-महाभूतों के संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु उन्हें दैविक स्वरूप प्रदान किया गया है। पर्यावरण के प्रत्येक तत्त्व को देवतुल्य सम्मानित स्थान देकर उन प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग का निर्देशन मानव को दिया गया है।[12] गीता में भगवान् ने कहा है कि, तुम देव प्रदत्त प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करो और उन्हें अजस स्रोत बनाये रखने के लिए देवताओं को तुष्ट करो। इस तरह हमारे ग्रंथों में पर्यावरण संक्षण एवं संवर्धन के बारे में अनेक निर्देश तथा आस्थाओं का प्रतिपादन किया गया है।

सन्दर्भ-सूचीः

1. ईशोपनिषद,
2. वही
3. ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अर्थववेद
4. पुराण-वामान, वराह, अग्नि, स्कंद, गरूड़, पदम,
5. ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अर्थववेद
6. वामन पुराण
7. महाकाव्य- रामायण, महाभारत
8. पतंजलि का महाभाष्य, महाभारत
9. वात्स्यायन का कामसूत्र
10. चरक संहिता- सुश्रुत संहिता, अव्यंग हृदय
11. विद्शाल भंजिका
12. भवभूति उत्तरामचरित, अर्थववेद